शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 अगस्त 2018
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

स्वयं प्रकाश की कहानियों में कस्बाई और महानगरीय परिवेश

कविता शर्मा (शोधार्थी)
महारानी श्री जया महाविद्यालय
भरतपुर, राजस्थान, भारत

शोध सारांश

स्वयं प्रकाश जी स्वतंत्रता के पश्चात् के महत्त्वपूर्ण रचनाकार है जिनके व्यक्तित्व और कृतित्व की कई दिशाएँ हैं। स्वयं प्रकाश जी की कहानियों का क्षेत्र बहुत व्यापक है। उन्होंने अपनी कहानियों में शहर से लेकर गाँव तक और उच्च वर्ग से लेकर मध्य वर्ग तक फ़ैली समस्याओं को अपना कथ्य बनाया है। आज का महानगरीय जीवन कुंठा, संत्रास, ऊब, अवसाद इत्यादि से ग्रस्त है। मनुष्य अकेलेपन को भोगने के लिए अभिशप्त है। दूसरी ओर ग्रामीण परिवेश में अभी भी सौन्दर्य शेष है। प्रस्तुत शोध आलेख में उनकी कहानियों में कस्बाई और महानगरीय परिवेश का विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तावना

समकालीन परिवेश में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मोहभंग की स्थित निर्मित हुई है। आर्थिक दबावों ने मनुष्य के सामाजिक, राजनितिक, और सांस्कृतिक मूल्यों को बदल कर रख दिया है। साहित्य की हर विधा में इन स्थितियों का सूक्ष्म चित्रण किया गया है। स्वतन्त्रता के पश्चात् कहानी अनेक मोड़ों से होकर गुज़री है। कहानी लेखन में अनेक नवीन तत्वों का समावेश हुआ है। यह स्थिति प्रधानतः परिवेश के बदलाव के कारण उभर कर आई। स्वांतत्र्योत्तर कहानी लेखन में जो परिवेशगत परिवर्तन हो रहा था, उसके प्रेरक तत्त्व तत्कालीन राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था में मौजूद थे। सन् 50 के बाद हिन्दी में जो नवलेखन का आंदोलन चला, वह मुख्य रूप से नगरबोध और आधुनिकतावादी दृष्टि का ही आंदोलन था। शिवप्रसाद सिंह का मत है कि "कहानी में नगरबोध थोड़ा भिन्न ढंग से आया। उस समय की अधिकांश चर्चित कहानियाँ जो नगर लेखकों ने लिखी नगर से उतनी संबद्ध नहीं थी, जितनी व्यक्तिवादी, आत्मीय मनः स्थितियों से।"[1] स्वयं प्रकाश जी चूँकि मानवीय संवेदना के कहानीकार हैं, अतः उन्होंने भी परिवेश के महानगरीय पक्ष को अपनी कहानियों में उभार कर उसे आम आदमी से संदर्भित किया है। स्वयं प्रकाश जी की कुछ कहानियों में व्यक्ति और समाज के रिश्ते मानवीय धरातल से उखड़कर यांत्रिक स्तर पर उभरे हैं।

कहानियों में कस्बाई और महानगरबोध

महानगरीय संस्कृति से उत्पन्न यातनापूर्ण जीवन अजनबीपन 'स्व' की तलाश, पारिवारिक विघटन, ऊब सत्रांस, आत्म निर्वासन आदि मनःस्थितियों को स्वयं प्रकाश जी ने अपनी कहानियों के माध्यम से अत्यन्त कुशलता से उजागर किया है। "महानगर की संस्कृति आमनवीकृत मूल्यों के रचाव की संस्कृति है। यहाँ एक ओर आधुनिकता के वरदानों और उपलब्धियों को कार्यान्वित करने की होड लगी है तो दूसरी ओर मानवीय संस्पर्श से धीरे-धीरे टूट जाने का मलाल भी है। एक

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 अगस्त 2018
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

विलक्षण अंतर्द्वन्द्व का सामना करता हुआ यहाँ का मनुष्य महानगर बोध की पीड़ा को वहन कर रहा है।"[2] स्वयं प्रकाशजी की कहानी 'संधान' में विश्व मोहन एक सामान्य मध्यवर्गीय परिवार का मुखिया है। सरकारी नौकरी करना और एक प्रकार के रूटीन का जीवन जीना उन्हें ठीक लगता है। परन्तु उनकी पत्नी और बच्चे तो समाज में रहते हैं। उनके आँख-कान हमेशा और अपने यहाँ कुछ भी न होने से खीझते-कुढ़ते रहते हैं। विश्व मोहन जी से जब भी कहीं बाहर चलने, कुछ औरों जैसा करने की कहते है तो वे बड़ी सफाई से उनकी बात टाल देते हैं। पर यह अनासक्ति बहुत लम्बे समय तक नहीं चल पाती। आखिर उन्हें झुकना ही पड़ता है। बड़े शहर के आकर्षण उन्हें बहुत लुभाते हैं। वे भरपूर उनका आनन्द लेते हैं और फिर उसी पुराने माहौल में लौट आते हैं। कई दिनों तक उन्हें अपने जीवन की मोहक स्मृतियां मस्त बनाये रखती हैं, पर जैसे ही धुधंली पड़ती है तो उन्हें अपनी जगह अधिक पिछडी, गन्दी व अरूचिकर लगने लगती है, क्योंकि अब वे यहाँ की सब चीजों की तुलना उस महानगर की चीजों से करते हैं। उन्हें लगता है वे बहुत भाग्यहीन अभिशप्त प्राणी हैं तभी तो यहाँ पड़ें हैं। लोग ऐश कर रहे हैं और वे यहाँ सड़ रहे हैं। अपनी जिन्दगियों को बर्बाद कर रहे है।

इसी दौरान उनके एक बचपन के लंगोटिया मित्र का पत्र आता है, जिसमें उन्होंने सपरिवार दो-तीन दिन के लिये आकर उनके साथ रहने की इच्छा जाहिर की है। पहले तो उनके आने से होने वाली असुविधाओं का अंदाजा लगाकर पति-पत्नी उन्हें मना करने के बहाने ढूँढते हैं, पर बाद में उन्हें आ जाने की बात पर सहमत हो जाते हैं। मित्र परिवार जो एक बडे शहर का रहने वाला है निश्चित समय पर आता है और दोनों परिवार जल्दी ही घुलमिल जाते हैं। जैसे बरसों से साथ रह रहे हों। मित्र परिवार को इस जगह की सब बातें अच्छी लगती है। वे यहाँ की हर चीज में रूचि लेते है। प्रशंसा करते हैं और इस बात का अफसोस करते हैं कि वे उन्हें अपने वहाँ नहीं मिल पाती। तीन दिन बाद मित्र परिवार चला जाता है लेकिन विश्वमोहन जी के परिवार की खीझ और कुढन को अनायास ही अपने साथ ले जाता है। वह मानने लगता है कि उसके पास भी कुछ ऐसा गर्व करने लायक है जो बड़े शहर वालों के लिए ईर्ष्या का विषय हो सकता है - "शहर से आयी आंटी शापिंग के बाद एक पुडिया खोलकर दिखाती है। सोजत की मेंहदी और कलौजी और अमचूर और साबूत मिर्च और रीठा और आँवलें और जामुन का सिरका और घाणी का सरसों का तेल और बताशे और खनतिल्ली और चिरोंजी दाने और यहाँ तक की बूंदी के लड्डू, मूँगफली की पट्टी, केर-साँगरी, जौ-चने की सत्तू और सींग की कंघिया। ये विवरण प्रेमचन्द की याद दिलाते है।"[3]

भूमण्डलीकरण अर्थव्यवस्था विकास की उस अवधारणा पर केन्द्रित है जो देश के अधिकतर संसाधनों को शहरों की समृद्धि में नियोजित करती है। इसी तरह 'बलि' कहानी भी ग्रामीण और शहरी सभ्यता के तनावों, परस्पर द्वन्द्वों और सक्रान्ति की पृष्ठभूमि में घरेलू नौकरानियों खासतौर से बालिकाओं और युवतियों की जद्दोजहद को रेखांकति करती है। विकास में विस्थापन की समस्या 'बलि' में भी है। वैसी ही जैसी वीरेन्द्र जैन जी के उपन्यास 'डूब' में हैं, लेकिन 'डूब' में डूबने के पहले तक ही कथा है।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 अगस्त 2018
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

'बलि' में विस्थापन और औद्योगीकरण से अभिशप्त एक समाज की बलि की कथा है। नगरीय परिवार की रसोई से आ रही सौंधी खुशबू ने भूखी मंगली के पाँव गाड़ दिए। मालकिन चोरी की आशंका से भर उठी। मंगली चोर नहीं, ईमानदार भूखी लड़की थी। नई चीजों को देखने महसूस करने को उत्सुक थी। मालकिन उसे काम पर लगा देती हैं। भूख ही नहीं, आदिवासी संसार का बहुत कुछ और नगरीय संसार का उससे संबंध सब इतने सजीव रूप में आते हैं कि उनकी गूँज लगातार सुनाई पड़ती है। प्रस्तुत पंक्तियों में बाजारवाद की प्रवृति दिखाई गयी है - "अब झगड़े होते रोज और कड़वे, गाली-गलौज, अबोला-बोली, लंबे मनमुटाव। गाँव के लड़के साहब लोगों की नकल करते है। सुंदरगढ से पतलून सिलवाकर लाते हैं। सिगरेट पीते हैं, साईकिल की जिद करते है नौकरी का ख्वाब देखते है, दुकानें खुलने लगीं हैं। कोई कद्दू बेच रहा है, कोई चाय-भजिया। एक कद्दू का एक रूपया, बच्चे भूखे रहते थे। चोरी करने के लिए हालात द्वारा उकसाए जाते थे और यदि नदी में मछली थी पेड़ पर फल आसमान में पंरिदा और धरती में जड़, तो जरूर उनकी भी कोई कीमत रही होगी।"[4]

इसी तरह 'गौरी का गुस्सा' कहानी यह संदेश देती है कि मौज की ऐसी इच्छाओं का कोई अंत नहीं है जो बिना कर्म किए आपको मिले। रतनलाल हमेशा अशांत ही रह जाता है, चाहे वह बड़े-बड़े महानगरों की चहल-पहल में हो या ऊँची-ऊँची ईमारातों में रहे सब बेमतलब का रह जाता है। इसलिए लेखक कहते हैं मनुष्य जैसा है वैसी दुनिया बना लेता है। रतनलाल अशांत है तो हर वरदान के मिलने पर भी वैसे ही रोता रहता है, जैसा बेरोजगारी के समय रोता था - "यह शानदार मकान एक शानदार कॉलोनी में था, जिसमें मकान गाडियाँ, सड़कें पेड़ सब कुछ विलायत जैसा था - सिवा नाम के जो संस्कृत का था विलास कुञ्ज। यहाँ के लोग एकदम अप-टु-डेट थे और बच्चे तो ऐसे गुलाबी और गबदूल्ले कि पूछो मत एकदम विलायती जैसे। सिर्फ उनके नाम संस्कृत से लेकर रखे हुए थे।"[5] परिवेश का एक-एक शब्द बता देता है कि नव धनाढ्यों की जीवन शैली स्वयं प्रकाश जी कितनी गहराई से पकड़ते हैं। अन्तिम बार उसे एक शानदार महानगर के शानदार मोहल्ले में एक शानदार मकान मिलता है। जिसमें वह अपना समान लाकर रहने लगता है। थोड़े दिन उसे बहुत अच्छा लगता है, लेकिन फिर ऊब जाता है और यथास्थिति में आ जाता है। महानगरीय परिवेश की चकाचौंध थोड़े ही दिन अच्छी लगती है। निश्चय ही उत्पादकता बढी है। समद्धि आई है, लोगों के जीवन स्तर भी समुन्नत हुए हैं फिर भी लोगों को वह सुख नहीं मिला है जो परम तृप्ति दायक होता है।

इसी तरह की कहानी 'ट्रेफिक' है। जिसमें बुजुर्ग शामलाल अपने हम उम्र जोशी जी को किसी बड़े शहर से लौटकर वहाँ की यातायात व्यवस्था के बारे में बताते हुए कहते हैं अब हम शहरों के लिए 'सूटेबल-बॉय' नहीं रहे हैं; क्योंकि महानगरों में अब पैदल चलना तो मुमकिन रहा ही नहीं है। तांगे, रिक्शे भी वहाँ से गायब हो गये हैं। अपने घर से आगे चौथे मकान में भी यदि कोई काम होता है तो वहाँ जाने की बजाय टेलीफोन से काम चला लेना अधिक सुरक्षित हो गया है। शामलाल जब अपने पोते से जरा धीरे गाड़ी चलाने को कहते हैं तो उसका जवाब होता है कि

- "आप यहाँ के ट्रेफिक को नहीं जानते दादाजी। आपकी 'सोकाल्ड' सभ्यता से गाड़ी चलांऊ तो कोई मुझे सड़क पर न चलने दे। सभ्यता का जमाना नहीं रहा अब। और वैसे भी इधर जो गाडियाँ आ रही है; वे फास्ट चलाने के हिसाब से ही डिजाइन की जाती है। स्लो वाली तो बस विन्टेज कार रैली में देखने को मिलती है और जिसे आप फास्ट कह रहे हैं कोई अमेरिकन जर्मन सुन लेगा तो हंसेगा। वह तो हंड्रेड से कम पर आप चला नहीं सकते। एन्ड आई थिंक दे आर राइट। वरना क्या फायदा कार रखने का।"[6]

निष्कर्ष

निष्कर्षतः स्वयं प्रकाश जी की कहानियाँ एक आम आदमी की कहानी है, जिसमें मध्यवर्गी जनसामान्य की आदतों, स्वभाव व संस्कार से अपनी कहानियों का माहौल निर्मित करते है। यही आम आदमी कहीं महानगरीय तो कहीं कस्बाई परिवेश में अपनी समस्त दुर्बलताओं तथा सबलताओं के साथ उनके लेखन में चित्रित हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ

1 आधुनिक परिवेश और नवलेखन, डॉ. शिवप्रसाद सिंह, पृष्ठ 102

2 नयी कहानी के तीन आयाम, डॉ. भगवानदास वर्मा, सम्पादक डॉ. साधना शाह, पृष्ठ 149

3 संधान, संधान संग्रह, स्वयं प्रकाश, वाणी प्रकाशन दिल्ली

4 'बेलि', प्रिय कथाएँ, स्वयं प्रकाश, पृष्ठ 116

5 'गौरी का गुस्सा', संधान संग्रह, पृष्ठ 28

6 'ट्रेफिक', संधान संग्रह, स्वयं प्रकाश, पृष्ठ 71